कहानी

फंदा

शिव अवतार पाल

राधेलाल घर पहुँचा तो सुरमई साँझ के साए आसमान से धरती पर उतरने लगे थे. भूख से उसकी आँतें ऐंठ रही थीं और प्यास से गला चटख रहा था. सुबह पौ फटते ही वह यूरिया लेने के लिए निकल गया था. इस समय धान की फसल के लिए यूरिया की सख्त जरूरत थी. सहकारी संघ पर खाद के लिए इतनी मारामारी थी कि सुबह से शाम तक भूखे-प्यासे लाइन में लगे रहो तब जरूरत के उलट मुश्किल से एक बोरी मिलती थी. इस समय पर्याप्त यूरिया मिल जाए तो धान उबार लेगा, बरना फंदे पर लटकने के सिबाय कोई रास्ता नहीं बचेगा उसके पास.

इस बार बाजरा दगा दे गया था. बौनी के समय आसमान से बरसती आफत बाजरा को लील गई थी. वह आसमान की ओर हाथ जोड़े इन्द्र देव से बाजरा बोने की मोहलत माँग रहा था, लेकिन इन्द्र देव ने जैसे किसानों को जीते-जी मारने की जिद ठान ली थी. पूरे सावन-भादों भर पानी बरसता रहा. खेत घास-फूस से भर गए थे. बेबस-विवश किसान मूक आर्तनाद कर रहे थे. उसने सावन में हिम्मत कर ट्रेक्टर से खेत जुतवा कर जिस धूप खिले दिन में बाजरा बोया, उसी रात इतना पानी बरसा कि खेत भर गए थे. जुताई का रुपया उधार था. बीज भी उधार लिया था. सिर पर पहले से चढ़ा कर्ज का बोझ और भारी हो गया था. कुछ दिनों बाद आसमान साफ होने पर गाँव के बड़े-बुजुर्गों से सलाह-मशविरा कर उसने चौधरी के हाथ-पाँव जोड़-जाड़ कर फिर बाजरा बोया, लेकिन बादलों ने इस बार भी उसके अरमानों पर पानी फेर दिया था. बाजरा से जानवरों के लिए चारा-दाना और जाड़ों में इंसानों को खाने की सहूलियत हो जाती थी. अकेले गेहूँ से साल भर पार पाना संभव नहीं था. अब बाजरा की उम्मीद धराशायी हो गयी थी. बाढ़ की वजह से हरी सब्जियाँ खत्म हो गयी थीं. महंगाई आसमान छू रही थी. भगवान जाने इस बार कैसे बेड़ा पार होगा? भाग में भूख से मरना लिखा है तो यही सही. उसका दिल खून के आँसू रो रहा था. लगातार पानी बरसने से सेंगर नदी उफान पर थी. घरों की देहरी तक पानी आ गया था. गाँवों में सावन-भादों भर हरे चारे की कमी नहीं रहती थी, लेकिन इस बार चारों ओर पानी भरा होने से घास न के बराबर थी. धान के अलावा अन्य खेत किसानों की किस्मत की तरह खाली पड़े थे. जानवरों के लिए चारे का घोर संकट खड़ा होने से कोई कुछ भी कहने-करने की स्थिति में नहीं था. अब सबकी नजरें धान पर टिकी थीं. उसके लिए भी पर्याप्त खाद नहीं मिल पा रही थी. किसान सहकारी संघ के लोगों की चिरौरी करते थे, जी हुजूरी करते थे कि जरूरत के हिसाब से खाद मिल जाए, लेकिन कोई सुनने-धुनने वाला नहीं था. सरकार कहती थी, खाद की कोई कमी नहीं है. उनके नुमाइंदे भी उन्हीं की भाषा बोलते थे, पर सच क्या है ये उन किसानों से पूछो जो सारा काम छोड़ कर खाद मिलने की आस में घंटों उमस भरी गर्मी और आग बरसाती धूप में पसीना बहाते थे. खाद की कमी नहीं थी तो किसानों को मिलने की बजाय गायब कहाँ हो रही थी? सरकारी हुक्मरानों की मिली भगत से काला बाजारी हो रही थी, तभी तो सहकारी संघों पर यूरिया नदारद और निजी दुकानों में दूनी कीमत पर जितनी चाहो उतनी उपलब्ध थी. किसानों को सरकारी मूल्य पर खाद लेने के लाले थे तो दूनी कीमत में लेने की सोचना आसमान के तारे तोड़ने जैसा था. उनके हिस्से की खाद हाकिमों की मिली भगत से प्राइवेट दुकानों पर पहुँच जाती थी. ये मोटे पेट वाले हाकिम हजारों रोग पाले रहते हैं. इनकी आधी तनखा डॉक्टरों के यहाँ पहुँचती है, इसके बावजूद गरीब किसानों का खून पिए बिना इनका जी नहीं भरता. उसे एक बोरी से संतोष करना पड़ा था.

राधे ने चबूतरे पर साइकिल खड़ी कर यूरिया की बोरी उतार कर ओसारे में रखी और पत्नी र'जो को आवाज दी. वह गुड़ की एक बड़ी ढेली और बाल्टी में टटका पानी ले आई. राधे ने गुड़ खाकर दो लोटा पानी पीया और चेहरा धोकर सिर गीला किया, तब उसकी जान में जान आयी.

रज्जो चारपाई बिछा कर बोली, दिन भर के थके-हारे हो, थोड़ी देर आराम कर लो, सब्जी बन गयी है, अभी रोटी सेंकती हूँ.

जरा जल्दी करना. बड़ी जोर की भूख लगी है.'' वह पेट पर हाथ फेरते बोला. राधे खाना खा चुका तो र'जो ने थाली उठा कर पनाले की पटिया पर रख दी और उसके पास बैठती बोली, दिन में ननकू जुताई के रुपए माँगने आया था. मैंने कह दिया, दो बार की जुताई अकारथ हो गयी. बीज के रूपए गाँठ से गए सो अलग. अभी तो जहर खाने के लिए भी रुपए नहीं हैं. थोड़ा सबर करो, गाँव छोड़ कर नहीं भाग जाएंगे. धान की फसल पर आना-पाई चुकता कर देंगे.

ठीक किया. वह गहरी साँस लेकर बोला, चौधरी का ब्याज नदी के पानी की तरह बढ़ रहा है. उससे रुपए लेकर खाद के लिए मारे-मारे फिर रहे हैं. आज एक बोरी मिली है. कल चार और मिल जाएं तो धान की फसल सब संकटों से उबार देगी. इसके बाद गेहूँ और सरसों करेंगे. मौसम ने साथ दिया तो चैत में चार पैसे हाथ में आ जाएंगे.''

भविष्य के इस सुखद स्वप्न ने र'जो की आँखों में क्षण भर के लिए चमक ला दी थी. फिर अगले ही पल यथार्थ के धरातल पर पैर रखती बोली, खेती-किसानी में हरदम हाथ तंग रहता है. मौसम किसानों का कभी सगा नहीं हुआ. इससे अ'छा है कहीं बाहर निकल कर मेहनत-मजूरी करें. चैन की रोटी तो खाने को मिलेगी.

राधे उसे झिड़क कर बोला, तू फालतू की मगजमारी क्यों करती है. अपने खेत छोड़ कर दूसरों की चाकरी करने में कौन सी अकलमंदी है? ऐसे ही दिन हमेशा नहीं बने रहेंगे. कभी तो ईसुर हमारी और देखेंगे. अपनी खुसी से चाकरी कौन करना चाहता है? मुझे जो ठीक लगा सो बोल दिया. र'जो ने बेरुखी से कहा, इतनी उमिर रोते-धोते बीत गयी. अब तक तो ईसुर ने हमारी सुनी नहीं. तुम्हारी जुबान पर सुरसती माई बैठी हों तो और बात है.

राधे के मन में भी कभी-कभार ऐसे ही ख्याल आते थे कि खेती-बाड़ी का मोह तियाग कर दिल्ली के किसी कारखाने में मजदूरी करना 'यादा अ'छा है. महीने के आखिर में तनखा तो मिलेगी. यहाँ तो दो पैसे की उम्मीद भी दूर की कौड़ी लगती है. हाट-बाजार में कुछ खाने की तलब हो तो मन मार कर रह जाओ. बाल-ब'चे मन मसोस कर रह जाएं तो बड़ी ग्लानि होती थी. उसे हालात सुधरने की आस थी. आस है तो सपने हैं. सपने हैं तो उम्मीद है और उम्मीद जिंदा है तो इंसान उसे पूरा करने के सौ जतन करता है. उसके मन मुताबिक सब ठीक रहा तो अ'छा है, वरना मजूरी तो बनी-बनाई है ही.

बाढ़ से स्थिति बेकाबू होती जा रही थी. मिट्टी के कटान से जाने कितने लोग घर से बेघर हो गए थे. कई जानवर पानी की तेज रफ्तार धार में बहने से और कई भूख से तड़प कर दम तोड़ चुके थे. जाने कितनों लोगों के ख्वाब बाढ़ के तीव्र सैलाब में घुट कर बह गए थे. ऐसा खौफनाक मंजर था कि देख कर रूह काँपती थी. इंसान कुदरत के साथ खिलबाड़ कर रहा है तो अंजाम भी उसे ही भुगतना पड़ेगा.

क्वार लगते धीरे-धीरे बाढ़ का पानी कम होने लगा था. दमघोंटू सीलन, मरे जानवरों की दुर्गंध और बेहिसाब गंदगी से तरह-तरह की बीमारियाँ पाँव पसारने लगी थीं. घर-घर में खटियाँ बिछ गई थीं. भूख और आर्थिक विपन्नता से तबाह लोग ईश्वर से ठीक होने की मनौतियाँ मान रहे थे, गाँवों की परंपरागत जड़ी-बूटियों का सहारा ले रहे थे और नीम-हकीमों के हाथ-पाँव जोड़ कर गिड़गिड़ा रहे थे.

किसानों का अधिकांश भूसा पानी में बह गया था. थोड़ा-बहुत जो बचा था, वह भींगने से सड़ गया था. हरा चारा देखने को नहीं था सो बचे-खुचे जानवर भूख से मरने की कगार पर थे. ऐसी विषम परिस्थिति में आपदा में अवसर तलाशता नौशाद कसाई द्वार-द्वार जाकर औने-पौने दामों में जानवरों की खरीद-फरोख्त कर रहा था. एक सुबह वह राधे के द्वार पर पहुँचा. राधे बाहर ही मिल गया था. राम-जुहार कर उसने चबूतरे पर बंधी भैंस के पुट्ठों पर हाथ रख कर कहा, भैंस बैंच लो राधे भैया. अभी ठीक-ठाक दाम मिल जाएंगे.

कितने में लोगे? उसने यूँ ही पूछ लिया.

बीस हजार अभी गिनवा लो.

पहला पड़िया है नौशाद. इस महीने के आखिरी में बिया जाएगी. दस लीटर से कम दूध दे तो मुफ्त ले जाना.

नौशाद जानवरों को हलाल कर उनका माँस फुटकर दुकानदारों को सप्लाई करता था. खाल और अन्य अवशेष ट्रकों में भर कर बाहर शहरों में भेजता था. इस धंधे में मोटा मुनाफा था. राधे की भैंस उसे पहली नजर में भा गयी थी. चालीस हजार में भी सौदा महंगा नहीं था. कुशल व्यापारी की तरह पासा फेंकता बोला, हम कसाइयों को दूध से क्या लेना-देना? बीस हजार लो और भैंस मेरे हवाले कर दो.

राधे किसान था. उसकी नजर में दूध के हिसाब से भैंस का सौदा होना चाहिए था, पर नौशाद की बात सुनकर वह चौकन्ना हो गया. भैंस जब एक साल की थी, तब जरूरत पड़ने पर मजबूरी में उसकी माँ को बैंचना पड़ा था. एक साल की उस नन्हीं सी जान को उसने औलाद की तरह पाला था. कटने के लिए उसका सौदा करने में उसका दिल धड़कने लगा. वह आहत भाव से बोला, ब'चों के घी-दूध के लिए रखी है भाई. बिकाऊ नहीं है.

नौशाद घुटा हुआ घाघ था. पैंतरा बदल कर बोला, इसके खाने के लिए चारा कहाँ से लाओगे राधे भैया? खूँटे पर भूखी-प्यासी मारने से अ'छा है, रुपए सीधे कर लो. हामी भरो तो तीस दे सकता हूँ.

राधे बेरुखी से बोला, इसके भूखों मरने की फिकर तुम क्यों करते हो? ये सोचना मेरा काम है. ईसुर एक द्वार बंद करता है तो दस द्वार खोल देता है. बाल-ब'चों के भाग्य में दूध-घी खाना लिखा होगा तो कोई न कोई रास्ता जरूर निकल आएगा. नौशाद को ऐसे उत्तर की उम्मीद नहीं थी. उसने आखिरी दाँव फेंकते हुए कहा, चालीस ले लेना. अब इसके आगे मेरी औकात नहीं है.

राधे का मन डोलने लगा. एनपार की साफ-सुथरी दस लीटर दूध की पहला पड़िया. अस्सी से कम की नहीं थी. जिसके खूँटे पर बँधेगी, उसके द्वार की सोभा बढ़ जाएगी; लेकिन आज के हालात में, जबकि चारे की भारी किल्लत थी, चालीस बहुत थे. उसके दोनों ब'चे बुखार में तप रहे थे. चौधरी का ब्याज बढ़ता जा रहा था. ननकू भी कई बार तकादा कर चुका था. चालीस में सबसे उरिन हो जाएगा और ब'चों का ठीक से इलाज भी हो जाएगा.

उसे सोच में डूबा देख नौशाद की बाँछें खिल गई, पर प्रत्यक्षतः रूखे मन से बोला, क्या कहते हो भैया? मुझे और भी काम हैं.

घरवाली से राय-मसबरा करना पड़ेगा भाई. थोड़ी मोहलत तो दो. उसने बेध्यानी में कह दिया.

नौशाद आश्वस्त था कि उसने जो फंदा फेंका है, राधे उससे निकल कर हरगिज नहीं जा सकेगा. इत्मीनान से बोला, ठीक है भैया. भाभी से बात कर लो. मैं रुपए लेकर कल सबेरे इसी वक्त आऊँगा.

नौशाद चला गया तो राधे ने भैंस की पीठ पर हाथ फेरा. वह लाड़ लड़ाती उसका हाथ चाटने लगी. उसने सोचा, जानवर बोल नहीं पाते, लेकिन इंसानों की नीयत और नेह को अ'छी तरह समझते हैं. नौशाद ने उसके पुट्ठों पर हाथ रखा तो कैसे डर कर रँभाने लगी थी.

राधे का मन पूरे दिन उड़ा-उड़ा सा रहा. उसे लग रहा था कि उसकी देह के भीतर चीटियाँ घुस कर रेंग रही हों.

रात में काफी देर तक उसे नींद नहीं आयी. दिल में कील सी गढ़ी महसूस हो रही थी. मन बड़ा बेचैन था. लग रहा था कि वह किसी अनचीन्हे पाप की नदी में डुबकियाँ खा रहा हो और उसके कपड़े गीले होकर भारी हो गए हों. घड़ी भर को आँख लगी तो लगा कि भैंस उसका हाथ चाटती आर्तनाद कर रही हो, दादा, मैं तुम लोगों की जूठन-सकरन खा कर पड़ी रहूँगी. रुपयों के लिए मुझे कसाई के हाथों में न सौंपना. सहसा उसकी आँख खुल गयी. उसने देखा भैंस साइत उसकी तरह जागती सोच रही थी कि क्या पता कल इस खूँटे पर रहेगी या कसाई के हाथों मार दी जाएगी. उसकी मूक वेदना महसूस कर उसकी आँखों में आँसू आ गए. वह उठा और उसके ललाट पर हाथ फेर कर अभयदान देता मन ही मन बोला, नाहक फिकर न कर, तू हमेसा इसी खूँटे पर रहेगी. सुबह तय वक्त पर नौशाद आया और रुपए निकाल कर बोला, गिन लो राधे भैया. चालीस हजार में एक रुपया भी कम हो तो तुम्हारा डंडा और मेरा सिर. रुपए रख लो नौशाद. राधे उसका फेंका फंदा तार-तार करता बेरुखी से बोला, घरवाली भैंस का बेचने को राजी नहीं है. नौशाद एक पल को भौचक-सा खड़ा रहा, फिर नाउम्मीद होकर कर मुँह लटकाए चला गया.

भैंस ने रँभाते हुए राधे की ओर देख कर सिर हिलाया. जैसे कह रही हो, तुम्हारा दिल बहुत बड़ा है दादा.

क्लास by बड़े भाई

अपनों में सम्मान नहीं प्यार खोजिए

संदीप द्विवेदी
कवि/प्रेरक वक्ता/स्किल ट्रेनर

मैंने कई लोगों को यह कहते सुना और इससे दुखी होते देखा है कि मेरी बाहर बड़ी क़द्र है लोग मेरा बड़ा सम्मान करते हैं लेकिन घर में कोई क़द्र नही करता. ऐसा लगता है मैं कुछ हूँ ही नही.

छोटे भाई, क्या आपको भी ऐसा लगता है, चलिए फिर तो हम आप एक जैसे हुए. मुझे भी ऐसा ही लगता है. इतना बढिया लिखता हूँ लेकिन घर वाले हैं कि अखबार की तरफ एक बार देखते भी नही. यह तो सरासर गलत है. इतना नाम है मार्केट में लेकिन घर में पहुँचता हूँ तो कोई भाव ही नही देता. ह ह ह

लेकिन छोटे भाई सच कहें तो इसमें कहीं न कहीं हम दोनों ही गलत हैं यदि हम ऐसा सोच रहे हैं तो.. छोटे भाई, आप अपने परिवार से जिसने आपको इस दुनिया में कदम रखने से इस उम्र और पड़ाव तक आते देखा हो, गोद में खिलाया हो आपके सारे प्रयास उसने देखे हों, सब कुछ सीखते पढ़ते देखा हो, उससे अचानक कुछ बड़ा करने के बाद अलग तरह के व्यवहार की अपेक्षा करने लगें तो यह कैसे हो सकता है बल्कि ऐसी अपेक्षा करके हम रिश्तों को असहज करते हैं और जाने अनजाने उन्हें कमतर भी दिखा देते हैं. यह हमारी ओर से रिश्ते में दूरी बनने का यह पहला प्रहार साबित हो सकता है. याद रखिये आपको ऊंचा स्वीकारने में किसी को तब तक कोई दिक्कत नही होती जब तक आप उन्हें नीचा न दिखाएँ और ऐसी अपेक्षाएं अक्सर ऐसा करा बैठती हैं.

दूसरी बात यह कि जब हम कुछ बढिया करते हैं तो उन्हें गर्व होता है लेकिन हम सोचें कि जिस परिवार ने हमें हमेशा तू कहके बुलाया हो वो अब आपको आप कहे, आप आयें तो कुर्सी छोड़ दे तो ऐसी अपेक्षा कितनी उचित है इस पर आप स्वयं विचार करें.

छोटे भाई , अपनों के बीच की नोकझोंक चलने दें, इसका आनंद लें, अपनी खुशियों में, उपलब्धियों में उनको शामिल करें जैसे बचपन में करते थे. जहाँ अस्तित्व हो वहाँ क्या दिखावटी औपचारिकताएं.

छोटे भाई, घर में सम्मान नहीं प्यार और दुलार खोजें, आपके लिए अनकहा फ़िक्र खोजें, पूरा विश्वास है आपको भरपूर दिखेगा. वो तब भी रहेगा जब आप कुछ नहीं रहेंगे लेकिन सम्मान आपकी उपलब्धियों के सूरज चमकते रहने तक.बाकी आप पर है जैसा आप उचित समझें. बस , यही कहना था .. धन्यवाद

पुस्तक चर्चा

संवेदना से रीते हम शव में बदलते जा रहे हैं

मनीष वैद्य

इस मूल्य विहीन होते समाज में अगर मैं चिल्लाता हूँ कि भाषा भी एक नैतिक मूल्य है ....किसी को कोई फ़र्क नहीं पड़ता. अपने आस-पड़ोस, प्रकृति, अपनी भाषा और लिपि को बचाने के लिए संवेदनशील कवि की चिंता न केवल जायज है बल्कि ज़रूरी भी. उसकी संवेदना गहरे तक जुड़ती है और उसे बेचैन कर देती है. सुपरिचित कवि हेमंत देवलेकर का ताज़ा कविता संग्रह %प्रूफ़ रीडर% हमें उनकी बेचैनी के साथ हालिया चुनौतियों और विसंगतियों को पूरे ताप, तल्खी, तड़प, तेवर, तरीके और तरतीब से खोलता है.

यह हेमंत का तीसरा संग्रह है, लेकिन उनका कवि कर्म बेहद चौकस, प्रतिबद्ध और गंभीर है. छोटे-छोटे सवालों के साथ बहुत बारीक-सी दिखने वाली छोटी-छोटी हस्बेमामूल चीज़ों पर लिखते हुए वे हमें चौंकाते हैं. 'प्रूफ़ रीडर', 'गार्ड की पेटियाँ', 'जूता', 'भैंस का ब'चा', 'मछली की दुकान पर कुत्ता', 'केले', 'गोमती कुण्ड की मछलियाँ', 'मटर की फली', 'काला चश्मा', 'खटमल', और 'इ-इमली का' जैसी कविताएँ बेहद साधारण से दिखने वाले विषय हैं लेकिन हेमंत जब उन्हें कविता में लाते हैं तो वे अपनी अर्थवत्ता में अनायास असाधारण से दिखने लगते हैं. 'अनाथालय में ईश्वर', 'बीज पाखी', 'हार्मनी', 'लिपि', 'कामाख्या देवी', 'प्रेम में भाषा', 'भरोसा', 'पूँजीपति', 'बेचारा खेत', 'रेत की हवस', 'दृश्य', 'तार पर पक्षी' तथा 'कर्टन कॉल' मानीखेज कविताएँ हैं. 'ख़याल गाथा' कथात्मक है जो कविता में कथा सा वितान रचती है. ''

शीर्षक कविता 'प्रूफ़ रीडर' बहुअर्थी और कई पाठ खोलती कविता है जो हमारी भाषा और लिपि के बड़े मुद्दे इसके ज़रिए पाठक के जेहन में रोपती है. इसे पढ़ते हुए हम भाषा के उस अद्भुत कारीगर की दिक्कतों-दुश्वारियों से रू-ब-रू होते हैं. ये दुश्वारियाँ उसके अपनी निजी या पेशे से जुड़ी हुई नहीं हैं और न ही उसके नफ़े-नुकसान की. बल्कि उस समाज और उसके सरोकार से जुड़े यक्ष प्रश्नों की हैं. यहाँ प्रूफ़ रीडर का क़द हमारी नज़रों में बढ़ जाता है, जब वह हमारी ख़त्म होती हुई भाषा के सवालों से जूझते हुए कह उठता है-और मैं यह सब देखने के लिए विवश हूँ/ यह देखकर भी कितना चुप हूँ/ कि मेरी भाषा परतंत्रता की गुंजलक में फँसती जा रही है.

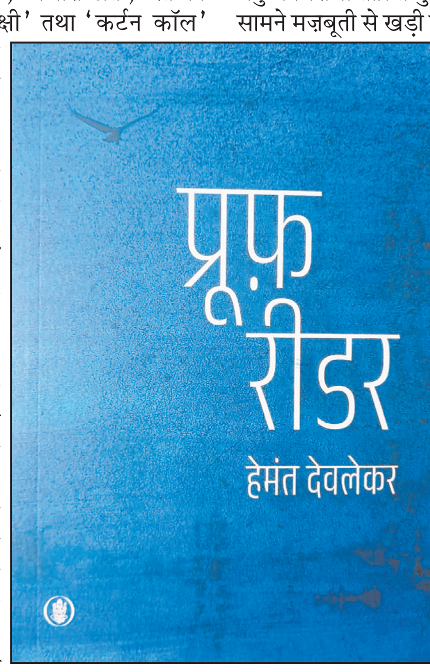

लेकिन कवि चुप नहीं है, आज के इस कठिन वक़्त में भी वह बड़ी मुखरता से रच रहा है. जबकि तमाम मनुष्य विरोधी ताक़तें दुनियाभर में संगठित रूप में हमारे सामने मज़बूती से खड़ी दिखाई देती है. अर्थ, धर्म, शक्ति और सत्ता का गठजोड़ हर दिन नए-नए जाल बुन रहा है. कवि का मासूम भरोसा शब्दों से टूटा नहीं है. हेमंत की कविताएँ इसकी बानगी हैं. ये हमारे मौजूदा समाज और समय की गहरी समझ के साथ, दूसरे शब्दों में कहें तो मुक्तिबोध के यहाँ पार्टनर से पूछी जाने वाली पॉलिटिक्स के क़रीब पहुँचती हैं. अँधेरे समय में कविता ही वह मशाल बन सकती है, जिसकी बात कभी प्रेमचंद किया करते थे.

इनमें समाज, संस्कृति, राजनीति, धर्म, मिथक के गहरे निहितार्थ हैं तो इस दौर में मुखौटों के पीछे छिपी साज़िशों से भी कवि अनजान नहीं है. इन कविताओं की संवेदना का दायरा बहुत बड़े कैनवास तक फैला है. उसकी जद में पूरी दुनिया है. वैश्विक चिंताएँ हैं लेकिन उसके केंद्र में मनुष्य है. लोकल होते हुए कविता की बात ग्लोबल हो जाती है. कवि की संवेदना की अनुभूति देख सकते हैं-मटर छीलता हूँ/ दानों के बीच एक इल्ली है/ गहरे इत्मिनान में सोई/ जैसे मटर के दानों में शामिल हो उसका भी बीज/ आँखों में भर आती है ममता... क्या हक़ है मुझे/ उसे दानों से अलग कर देने का ?

इन कविताओं का स्वर अलहदा है और इस समय लिखी जा रही कविताओं से कई मायनों में इतर भी. विषयवस्तु के स्तर पर ही नहीं, भाषा और बिम्बों में भी एक अनूठी ताज़गी है, भाषा में पहली बारिश के बाद की मिट्टी की सौंधी महक है, ठंडी बयार के झोंके हैं. सावन की फुहारों के संगीत का जादू है. टटके बिम्ब कविता अनायास ताज़े खिले फूलों की तरह हमें सुवासित कर जाते हैं.

ये कविताएँ पाठक के मन में पैठ कर कहीं हिलगी-अटकी रह जाती है. देर तक उसके भीतर हलातोल करती उसके मन-मानस को मथती रहती हैं. कवि कहता है-मेरी कलम की स्याही में ..ख़ून भी और दवाएँ भी. लेकिन दूसरे ही पल कवि कहता है कि संवेदना से रीते हम शव में बदलते जा रहे हैं.

अफ़सोस कि हमारे ख़ून में कोई तांडव नहीं
धीरे-धीरे शव में बदल जाना ही
क्या हमारी मनुष्यता है.

प्रूफ़ रीडर (कविता संग्रह)
हेमंत देवलेकर
प्रथम संस्करण 2025
कीमत- 250 रुपये
राधाकृष्ण पेपरबैक्स, दिल्ली

लघुकथाएं

टन टन टन

गुप्ता जी रोज़ की तरह आज भी अख़बार में घुसे थे, गुप्ता जी की आदत थी जब तक घड़ी 9 न बजाए, अखबार से चिपके ही रहते थे. आज भी घड़ी ने जैसे ही नौ बार पुकारा, गुप्ता जी झट तौलिया उठा, लपड़ धपड़ बाथरूम की ओर लपके.

धड़ाम!!!

अचानक आंगन से ज़ोरदार आवाज आई.

रीना, जो किचिन में नाश्ता और टिफिन की जुगलबंदी में लगी थी, घबराकर दौड़ी. बाहर आकर जो नज़ारा देखा तो हँसी रोकना मुश्किल हो गया.

आंगन में गुप्ता जी बड़े शाही अंदाज़ में फ़िसले पड़े थे. उनका भारी-भरकम शरीर, टेढ़ा-मेढ़ा होकर जमीन पर ऐसा पसरा था मानो किसी मूर्तिकार का बड़ा सा अनगढ़ अधूरा शिल्प.

रीना ने होंठ दबाकर हँसी छुपाई, फिर गंभीर आवाज़ में बोली -

क्या ढूँढ रहे हो गुप्ता जी?

धरती के अंदर छुपा खज़ाना या बाथरूम का शॉर्टकट?

खिसियाते गुप्ता जी अब कराहते हुए बोले -

अरे रीनाज ये फर्श बड़ा धोखेबाज़ है, ऊपर से चिकना और अंदर से कठोर!

रीना अब हँसी रोक न सकी. पूरा आँगन ठहाकों से गूँज उठा.

नील मणि

अस्सी के दशक की पीढ़ी

सिया कल क्यों नहीं आई थी कॉलेज?

अरे! चार दिन तक सुबोध कॉलेज नहीं आया था ना, तो घर आ गया नोट्स लेने. बाबा बैठक में थे. उन्होंने मुझे आवाज़ लगाई और मैंने जाकर सुबोध को नोट्स दे दिए.

अगले दिन जैसे ही कॉलेज जाने को निकली और रिक्शे में बैठी, तो पापा भी आकर बैठ गए. बोले-

'मुझे भी उधर ही जाना है'.

- 'ठीक है'.

फिर उससे अगले दिन भी ऐसा हुआ. तीसरे दिन जब पापा फिर साथ चले, तो मुझे समझ आ गया कि दाल में कुछ काला है. बस उसी पल मैंने कॉलेज आने से मना कर दिया और कहा-

'पापा ऐसा है...यदि मुझ पर भरोसा नहीं है, तो मुझे नहीं करना बी एड. आप मेरी सगाई करवा चुके हैं. मुझे फौजी मिल चुका है. उन्हीं के कहने से मैं बी एड कर रही हूं. फिर मुझ पर पहरा क्यों?'

अब बाबा, मम्मी, पापा सब चुप थे. मेरे शब्द तीर की तरह जाकर लगे. तीनों एक-दूसरे का मुँह ताक रहे थे.

बस इसीलिए नहीं आ पाई थी, कल कॉलेज.

सिया की आँखों में आत्मविश्वास की चमक थी – जैसे वह कह रही हो कि बेटी को हमेशा शक की निगाह से नहीं, भरोसे की नज़र से भी देखना चाहिए.

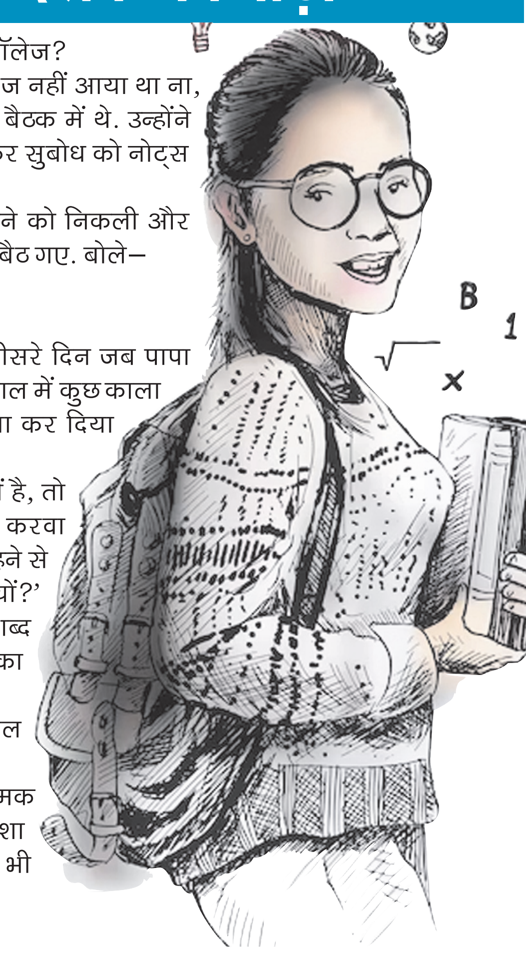

कला और कविता का अंतर्संबंध

कला और कविता का संबंध गहरा है.यह अकारण नहीं है कि कलाकारों की इच्छा कविता लिखने की हुई है और कवियों ने चित्र बनाए हैं. दरअसल प्रतीकों और बिंबों का इस्तेमाल ये दोनों ही विधाएं करती आयी हैं.

फिर यह भी कि कलाकारों को लगता है / लगता रहा है कि कोई कवि कैसे बिना रंग और तूलिका के, शब्दों से, कुछ ऐसा रच देता है जो रंग और तूलिका साधारणतः संभव नहीं कर पाते और कवियों को जाने अनजाने यह लगता है / लगता रहा है कि कविता में जो कहने से छूट जाता है ,उसमें अंटता और उभरता नहीं है, वह चित्रकला में व्यक्त हो सकता है. यानी दोनों एक दूसरे के पूरक हो उठते हैं, एक दूसरे को काम्प्लीमेंट करते हैं, और कवियों में चित्रकला के प्रति तीव्र आकर्षण पैदा करते हैं तथा चित्रकारों में कविता के प्रति एक सम्मोहन.

रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने जो चित्र बनाये वे उनकी कविता की दुनिया से कहीं कहीं जुडते भी हैं , पर, बहुत भिन्न भी लगते हैं. एक भिन्न दुनिया रचते हैं. इस सिलसिले में उदाहरण और भी दिये जा सकते हैं.कला और कविता के संबंध में दुनिया की तमाम भाषाओं में बहुत कुछ सोचा विचारा गया है.

✍ प्रयाग शुक्ल

संपादकीय बोर्ड | प्रबंध संपादक : सुमीत माहेश्वरी, समूह संपादक : क्रांति चतुर्वेदी